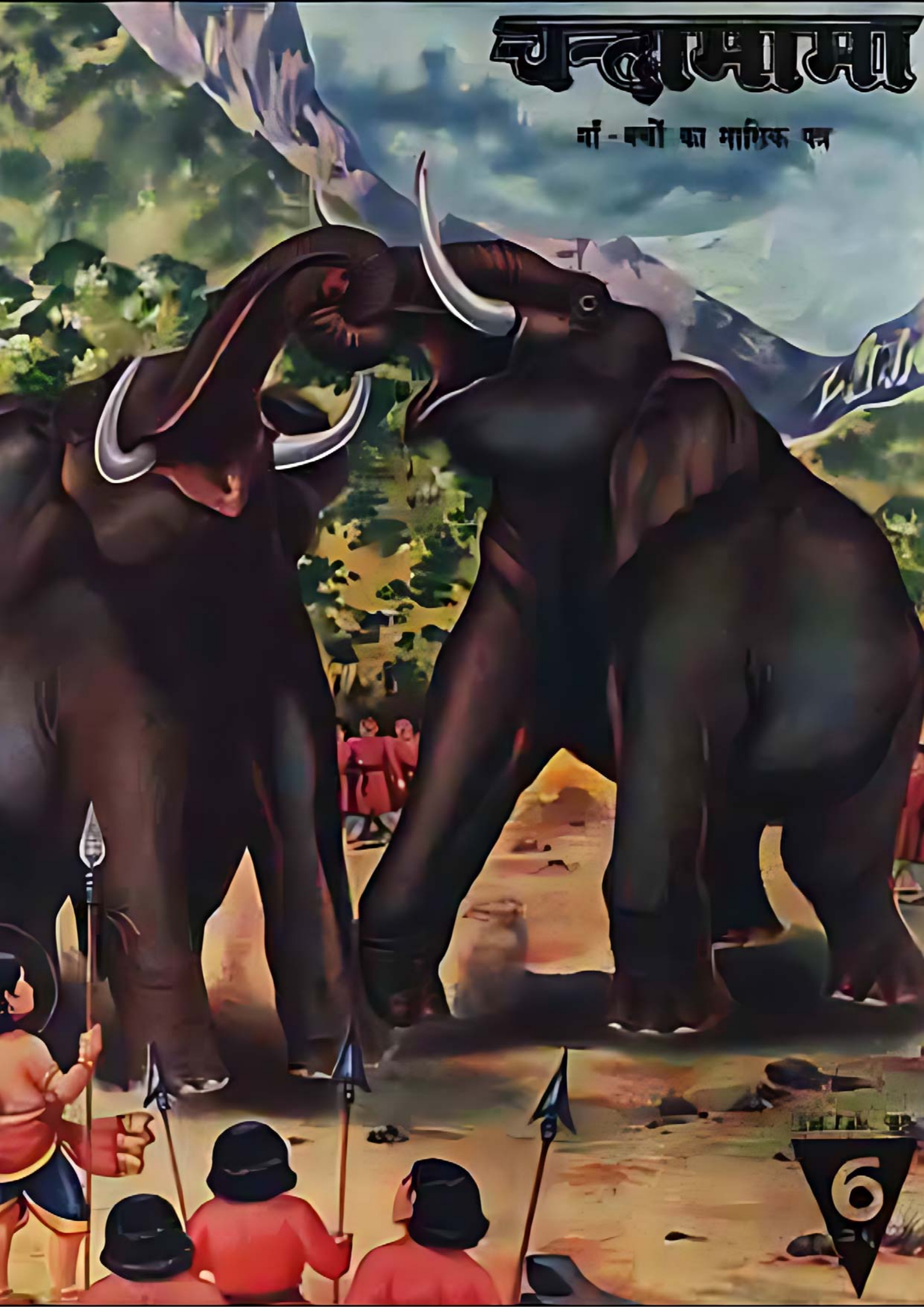

चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
6



काशी राज्य के राजा ब्रह्मदत्त के लड़के के रूप में बोधिसत्व ने जन्म लिया। ब्रह्मदत्त ने उसका नाम शीलव रखा।

ब्रह्मदत्त के बाद, शीलव काशी राज्य का राजा हुआ। उन्होंने बड़े प्रेम और उदारता से प्रजा का पालन किया। उन लोगों को, जो गरीबी के कारण चोरी किया करते, या निस्सहाय अवस्था में दूसरों को तङ्ग करते, उनको बुलाकर बोधिसत्व समझाते और कभी कभी उनको रुपया पैसा भी देते। इस कारण राज्य में चोरियाँ बगैरह ही कम नहीं हुई, अपितु प्रजा भी राजा से अत्यधिक प्रेम करने लगी।

काशी राज्य के समीपवर्ती कोसल देश के मन्त्री को काशी राज्य को हड़प लेने की सूझी। उसने अपने राजा से कहा-"काशी का राजा शीलव बहुत निर्वल है। वह डाकू डकैतों को भी दण्ड देने में आगा-पीछा करता है। ऐसे डरपोक को हम आसानी से जीत सकते हैं।"

यह बात सच है कि नहीं, जानने के लिए, कोसल देश के राजा ने कुछ सैनिकों को बुलाकर आशा दी-"तुम काशी राज्य की सीमाओं को पारकर, वहाँ के गाँवों में लूट-मार करके आओ।"

ये सैनिक ज्योंही काशी राज्य के गाँवों में घुसे, त्योंही वहाँ के लोग उन्हें पकड़कर शीलव के पास ले गये।

"भाइयों! तुम विदेशी जान पड़ते हो। तुम गाँवों को क्यों लूटना चाहते हो? क्या कारण है?" शीलव ने पूछा।

"महाराज, हमें खाने पीने को भी नसीब नहीं होता, इसीलिये हमें लूट-मार करनी पड़ी।" सैनिकों ने कहा।



"अगर खाने-पीने को नहीं मिलता था, तो मुझसे क्यों नहीं कहा?" कहते हुये शीलव ने अपने खजाने से रुपया-पैसा मँगा कर उनको देकर विदा किया।

शीलव का यह व्यवहार देखकर कोसल राजा को और लालच हुआ। कुछ दिनों बाद उसने अधिक सैनिकों को, काशी राज्य के नगरों पर हमला करने के लिए भेजना शुरू किया। वे भी काशी राज्य की प्रजा के हाथों पकड़े गये। तब भी शीलव ने उनको पहले की तरह रुपया पैसा देकर भेज दिया, उन्हें किसी तरह की सज़ा न दी।

कोसल देश के राजा का हौसला बढ़ा। वह अपनी सेनाओं को जमा कर, काशी राज्य पर आक्रमण करने के लिए निकल पड़ा। जब यह बात गुप्तचरों द्वारा मन्त्रियों और सेनापतियों को मालूम हुई, तो उन्होंने शीलव के पास जाकर कहा- "महाराज! लगता है, कोसल देश के राजा हम पर आक्रमण कर रहा है, हमें मुक़ाबला करने की अनुमति कृपया दीजिये।"

शीलव ने युद्ध के लिए अपनी अनुमति न दी। "व्यर्थ रक्त-पात नहीं होना चाहिये। यदि वे मेरा राज्य ही लेना चाहते हैं, तो लेने दो। उनके लिए किले के फाटक खुले ही रखिये।" शीलव ने कहा।

"आप शत्रु के रूप में नहीं, मित्र ही बनकर आइये।" शीलव ने कोसल राजा के पास ख़बर भिजवायी। कोसल राजा ने सोचा कि शीलव अपनी कमजोरी के कारण ऐसा कर रहा है।

अपनी सेना के साथ राजा शीलव के दरबार में पैर रखते ही कोसल राजा ने अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि शीलव और उसके मन्त्रियों के हाथ पीठ पीछे बाँध दिये जायें।

"आपका इस तरह व्यवहार करना अच्छा नहीं।" शीलब ने कहा। कोसल राजा ने परिहास से अट्टहास किया।

शीलब और उसके मन्त्रियों के राज-वस्त्र उतार दिये गये। उनको मामूली कपड़े दे दिये गये। कोसल राजा ने शाम तक नगर छोड़कर उन्हें जाने की भी आज्ञा दी।

शीलव और उनके मन्त्री, शाम होते होते काशी नगर छोड़कर वन की ओर जा रहे थे। अन्धेरा हो जाने पर, वहीं जङ्गल में वे ठहर गये। रात भर, उन्हें कुछ खाने-पीने को न मिला।

आधी रात के समय कई सारे चोर वहाँ आकर शीलव से इस प्रकार कहा:

"महाराज! हम चोर हैं। आपकी कृपा से, अब तक हम बिना चोरी किये ही अपना गुजारा करते आ रहे थे। परन्तु आज से फिर हमारी दिक्क्तें शुरू हो गई हैं। इसलिये आज हमने राज महल में छापा मारा, और यह सब समान वहाँ से चुरा लाये हैं। ये लीजिये, ये आपकी पोशाकें हैं और तलवार गैरह। हम आपके लिये यह राजोचित भोजन भी लाये हैं। आप भोजन कीजिये



और हमें आज्ञा दीजिये कि हम इस रुपये-पैसे का क्या करें।"

शीलव और मन्त्रियों ने खा-पीकर, अपने अपने कपड़े पहन लिए। शीलव ने कहा-"अच्छा होगा, अगर आप यह जान लें कि नया राजा आपकी समस्याओं को किस तरह हल करता है। यह जाने बगैर चोरी करना अच्छा नहीं। यह घन ले जाकर राजा को दे दो और उनसे अपनी रोजी का रास्ता पूछो।"

"आतिथ्य देनेवाले को जिसने लूट लिया है, वह इतना न्यायशील नहीं होगा।

हम उस नीच के पास नहीं जायेंगे। आप ही हमारे महाराजा हैं। हमें आप ही रास्ता दिखाइये।" चोरों ने कहा।

"अगर तुम नहीं जाओगे, तो यह धन लेकर मैं ही जाऊँगा।" शीलब ने कहा।

वे अपने मन्त्रियों को साथ लेकर, सबेरे राज दरबार में पहुँचे। शीलव को वहाँ देखते ही कोसल राजा हैरान रह गया। फिर उसने कहा- "हमने आपसे कहा था कि अगर आप नगर में रहें तो आपके प्राण न बचेंगे। आप फिर क्यों आये?"

शीलव ने सारी घटना सुनाकर कहा- "आपने मुझसे राजगद्दी इसी कारण तो छीनी थी, ताकि आप मुझसे अधिक प्रेम से प्रजा का पालन कर सकें। बेचारे चोरों की इस बात की खबर न थी। उन्होंने सोचा कि आपके राज्य में उन्हें भूखों मरना होगा। इसी डर से उन्होंने आपका खजाना लूट लिया है। उनको यह आश्वासन देकर कि आप मुझ से भी अच्छी तरह उनकी देख-भाल करेंगे, में आपका धन आपके पास लाया हूँ। इसके सिवाय मुझे और कोई काम नहीं है।"

तुरन्त कोसल राजा का हृदय बदला। उसने शीलव के पैरों पर पड़कर कहा-

"महात्मा! आपके सद् व्यवहार को मैं न समझ सका। चोरों को भी आत्मीय की तरह प्रेम करनेवाले को मैं न पहचान सका। नीच मन्त्री की सलाह सुन मैने आपके साथ अन्याय किया है। कृपया आप अपना राज्य लेकर मुझे अनुग्रहीत कीजिये। मेरे लिये आपकी मैत्री काफी है। मुझे आपका राज्य नहीं चाहिये।"

शीलव ने कोसल राजा और उनके नौकर-चाकरों को कुछ दिनों अपने यहाँ रख सम्मान के साथ भेज दिया।





[७]

[प्रजा के आन्दोलन ने राजा चित्रसेन की मानो कमर तोड़ दी। उन्होंने यकायक राजमहल से कूदकर अपने प्राण छेड़ दिये। तब तुरन्त प्रजा समरसेन का जय जयकार करने लगी। समरसेन नरवाहन को साथ लेकर शत्रु का मुकाबला करने के लिये निकल पड़ा। बाद में....]

"दो तीन सौ पदातियों के आगे अर्ध चन्द्राकार रूप में कुछ घुड़-सवार चलने लगे। इससे पहले कि शत्रु पदातियों पर हमला कर सकते, उन्हें अब पहले समरसेन के घुड़सवारों का मुकाबला करना पड़ेगा न?" शिवदत्त ने पूछा।

"हाँ, समरसेन की व्यूह रचना लाजवाब थी न!" मन्दरदेव ने कहा।

"समरसेन की इस नई चाल ने शत्रु सेना में खलबली मचा दी। वे घबरा गये ज्यों ज्यों समरसेन की सेना आगे बढ़ती जाती थी, त्यों स्यों वे पीछे हटते जाते थे। मगर उनका पीछे हटना भी सुसङ्गठित था जैसे कोई चाल चल रहे हों। यकायक समरसेन की सेना के शंख नाद और 'जय जयकार' से आकाश गूञ्ज उठा। आगे बढ़ते उसके घुड़सवार, शत्रु घुड़सवारों से जा भिड़े। भाले बरछे, कटार-तलवार उनके हाथ में थे। उनके भीषण युद्ध का वर्णन नहीं किया जा सकता। वह बहुत भयङ्कर युद्ध था।

चार-पाँच मिनट में ही, शत्रु घुड़सवार तितर-बितर होकर इधर-उधर भागने लगे।

उसी समय पदातियों ने शत्रु पर हमला किया। विजयोन्मत्त समरसेन के घुड़सवार भी, शत्रुओं को बरछों से मारने लगे। शत्रु मुक़ाबला न कर सके और भागने लगे। पर भागने का रास्ता बन्द था, इसलिये शत्रु जमकर लड़ने लगे और खूब लड़े।

यह अनुमान कर कि समरसेन की ही अन्त में विजय होगी, मैं बहुत प्रसन्न था। मुझे यह भी विश्वास हो गया कि इस तरह देश में अराजकता का दमन कर दिया जायगा, और शान्ति की स्थापना होगी। उस हालत में किसी को भी नरवाहन की कुटिल राजनीति के कारण कठिनाइयाँ नहीं उठानी पड़ेंगी। सब जगह अमन और चैन का वातावरण बन जायगा। जनता का कल्याण होगा।

में यह सोच ही रहा था कि मुझे शत्रुओं का हाहाकार कर, मैदान छोड़कर भागना दिखाई दिया। भागते हुए शत्रुओं को समरसेन के घुड़ सवार अपने भालों का निशाना बना रहे थे। पदाति, घायल सैनिकों की मरहम पट्टी कर रहे थे। कई पास बहनेवाले नाले में जाकर अपनी प्यास बुझा रहे थे।



मैंने बुर्ज से उतरकर, नगर के फाटकों को खुलवाने की सोची। विजयी समरसेन की सेना का स्वागत करने की जिम्मेवारी मुझ पर थी। मैं बुर्ज से उत्तर ही रहा था कि मुझे यकायक जय जयकार की जगह सेना का हाहाकार सुनायी पड़ने लगा। मेरी कुछ समझ में नहीं आया।

मैं हैरान होकर झट वहीं खड़ा रह गया। युद्ध भूमि में, ऊँची जगह के चारों और सैनिक घूमने लगे। मैं अभी सोच ही रहा था कि यह क्या विचित्र घटना है कि दस घुड़ सवार अपने घोड़ों पर सबार हो, नगर के द्वार की और सरपट दौड़ने लगे। अनको पहचानना मुश्किल हो गया।

मैं घबरा गया। मैने सोचा कि शायद कोई दुर्घटना घट गयी है। यह भी सोचा कि वे दस घुड़सवार, जो नगर के द्वार की ओर भागे आ रहे थे, जरूर सन्देश वाहक होंगे। मैं जल्दी जल्दी बुर्ज पर से उतरा, अपने सिपाहियों को साथ लेकर, घोड़े पर सवार हो, नगर-द्वार के पास गया। मैंने द्वार खुलवा दिये।

द्वार खुलते ही दस घुड़सवार, तेज़ी से आगे बढ़े और नगर में घुसते ही





'नरवाहन महाराज की जय' चिल्लाने लगे। मुझे तुरन्त मालूम हो गया कि कोई धोखा दिया जा रहा है। 'ये बागी है। मारो इनको। काटो। इनको अन्दर आने मत दो।' कहते कहते मैंने अपने घोड़े को आगे बढ़ाया, और दो बागियों को तलवार से वहीं खतम कर दिया। मेरे सिपाही भी बाकी आठ घुड़सवारों का मुकाबला करने लगे।

गली में खड़े सैनिक और हथियार बन्द लोग एक क्षण के लिए स्तब्ध खड़े रह गये। फिर उनमें से कुछ सैनिक 'नरवाहन मिश्र की जय' चिल्लाते चिल्लते, तलवार निकाल कर आगे बढ़ गये।

हथियार बन्द आदमियों में भी खलबली मची। उनमें से कुछ नौजवान आगे बढ़-कर 'समरसेन की जय' चिल्लाने लगे और सैनिकों से मुकाबला करने लगे। खून बहने लगा।

तब जो गड़-बड़ी व मार-काट हुई, उसको युद्ध नहीं कहा जा सकता। हर हथियारवाले को दूसरा हथियारवाला शत्रु लगता था। उन्हें यह भी न मालूम था कि जिनसे वे लड़ रहे थे, वे मित्र थे या शत्रु। कई समरसेन का 'जय जयकार' कर रहे थे, और कई नरवाहन का। इस शोर-शरावे में, यह भी जानने का समय न था कि किसके मुँह से, समरसेन निकल रहा था,और किसके मुँह से नरवाहन। शत्रु-मित्र का भेद करना मुश्किल था। दङ्गा-फसाद चल रहा था।

मैं लड़ता लड़ता, सिपाहियों के साथ, धीमे धीमे राज महल के द्वार की ओर बढ़ा। द्वार-रक्षक मेरे ही सिपाही थे। उन्होंने मुझे देखते ही द्वार खोले, और मेरे अन्दर जाने के बाद दरवाजे फिर से बन्द कर दिये।

बाहर, गलियों में खूब लड़ाई-झगड़ा हो रहा था। उनमें कुछ समरसेन की तरफ थे, और कुछ नरवाहन की ओर। जब तक यह नहीं मालूम हो जाता कि युद्ध क्षेत्र में क्या हो रहा है, यह दङ्गा-फसाद यूँ ही चलता रहेगा। मैंने एक सिपाही को खुफिया रास्ते से, युद्ध-क्षेत्र में जाकर सारा वृतान्त जानने के लिए भेजा। और अब यह भी पता लगाना था कि नरवाहन के अनुयायी आगे क्या करना चाहते थे। सामने समस्या यह थी कि क्या वे लोगो से मुकाबला करने के बाद किले को भी घेरेंगे? चाहे कुछ भी हो, मैंने जी-जान से राज महल की रक्षा करने का निश्चय किया। मैं यह जानता था कि मेरे साथ के थोड़े बहुत सैनिक, और राज महल के चालीस-पचास सैनिक, बहुत देर तक शत्रु का मुक़ाबला न कर सकेंगे। और जब कोई रास्ता न हो, तो मुझे सिर्फ हिंस्र जन्तुओं को फिर पिञ्जड़ों से बाहर कर देना ही अच्छा उपाय सा लगा।

एक घण्टा बीत गया। गलियो में अब भी गड़बड़ी मची हुई थी। खुफिया रास्ते से भेजा सैनिक भी वापिस आ गया। वह जो बुरी खबर लाया,



उससे मेरे हृदय को बहुत दुःख हुआ। ऐसा लगा जैसे किसी ने भाला भौंक दिया हो। मैं सहसा मूर्च्छित-सा हो गया।

शत्रुओं से मुकाबला करते करते समरसेन बुरी तरह घायल हो गया था। फिर क्या था, उप सेनानी नरवाहन ने अपने को सेनापति और कुण्डलिनी द्वीप का राजा घोषित कर दिया। यह घोषणा सुनाने के लिए उसके कुछ अनुयायी शहर में भागे भागे आये थे।

"समरसेन की हालत कैसी है? क्या वे बात कर सकते हैं कि नहीं?" मैंने उतावलेपन से उस सैनिक से पूछा।



"वे बुरी तरह घायल पड़े हैं। अब और तब की बात है। यही मौका देखकर ही नरवाहन ने अपने को राजा घोषित कर दिया था। सेना में जितने भी छोटे छोटे सरदार हैं, सब उसी का साथ दे रहे हैं।" सैनिक ने बताया।

मैं समझ गया था कि हालत अब काबू के बाहर है। थोड़ी देर में नरवाहन स्वयं अपनी सेना के साथ नगर में प्रवेश करेगा। तब कुण्डलिनी द्वीप में भला उसका कौन मुक्काबला कर सकता था? मैं यह भी जानता था कि वह मुझसे कितना चिढ़ा हुआ था। इन परिस्थितियों को दृष्टि में रखते हुए मैंने सोचा कि खुफिया रास्ते से राज महल को छोड़कर बाहर चले जाने में ही भलाई है। नहीं तो हमें नरवाहन क़ैद कर लेता या मरवा देता।

मैंने अपने सिपाहियों को एक जगह बुलाकर उनको मौजूदा हालत समझायी। वे भी मेरे निश्चय से सहमत थे। बस, अब हमें इतना ही करना था कि चुपचाप खुफिया रास्ते से बाहर निकल जाये। नरवाहन भी जानता था कि राज महल से गुप्त मार्ग से बाहर जाया जा सकता था।



इसलिये बहुत होशियारी से काम करना था। मैं अपने सिपाहियों को लेकर खास राज महल में घुसा। मेरे कुछ दूर जाते ही, द्वार की ओर से शोर-शराबा सुनाई पड़ने लगा। पीछे मुड़कर देखा तो नरवाहन के कुछ अनुयायी, द्वार के लोहे के सीखचों को तोड़ने काटने का प्रयत्न कर रहे थे। वे अन्दर घुसने की कोशिश में थे।

मुझे झट एक उपाय सुझा। पहले की तरह, मृगशालाधिपति को बुलाकर मैंने हिंस्र जन्तुओं को पिञ्जड़ों से बाहर निकाल देने के लिए कहा। उसने मुस्कराते हुए

मेरी तरफ देखते हुए कहा-"मैं नहीं जानता कि आपके शत्रु कौन हैं, पर वे आप से अधिक अक्लमन्द मालूम होते हैं। घण्टा भर पहिले, वे ठीक तरह खा पी रहे हैं कि नहीं, यह जानने के लिये मैं पिञ्जड़ों के पास गया। मुझे यह देखकर अचरज हुआ कि उनमें से कई मर चुके थे। कई दर्द के मारे कराह रहे थे। यह है हालत जन्तुओं की। मैं नहीं जानता कि यह किसकी करतूत है।

मैं बिना कुछ कहे, पिञ्जड़ों की ओर भागा। मृगशालाधिपति ने सच ही बताया था। तो क्या इस सुगशालाधिपति ने ही जन्तुओं को जहर दिया था? या नरवाहन के किसी और अनुयायी ने? उस थोड़े समय में में यह न जान सका कि यह करतूत किसकी थी। समय न था। फिर भी मैंने मृगशालाधिपति के हाथ बँधवाकर एक कमरे में उसको डलवा दिया। तब हम गुप्त-मार्ग की ओर जल्दी जल्दी भागे।

गुप्त द्वार महाराजा चित्रसेन के शयनागार में था। वहाँ से एक तङ्ग सुरङ्ग जाती थी। किले की चारों ओर की खाई को पार कर, एक कोस दूर बाद, जङ्गल में, एक बड़े पेड़ के थाल में वह सुरङ्ग निकलती थी।

शयनागार में घुसते ही मुझे और मेरे सैनिकों को महाराजा चित्रसेन की लाश का ख़याल आया। अफसोस, उनकी लाश, अभी तक किसी कमरे में पड़ी हुई थी। अभी तक उसका दहन संस्कार न हो सका था। उनका राज्य और जीवन सब दुखान्त था। हम भी तब क्या कर सकते थे? गुप्त-द्वार खोलकर आगे की ओर हमने देखा। सब जगह घना अन्धकार था। (अभी और है)





उन दिनों राढ़ा नगर का उग्रभट राजा था। उसकी पत्नी का नाम मनोरमा था। पति पत्नी बड़े प्रेम से रहा करते थे।

एक दिन दूर देश से कोई नाटक मण्डली नगर में आई। उस मण्डली ने राजा के सामने "समुद्र मन्थन" नाम का नाटक खेला। देवता और दानवों के सम्मलित होकर दुग्ध सागर का मन्थन करने के पश्चात् विष्णु ने मोहनी रूप धारण कर अमृत बाँटा। यह पात्र मण्डली के मुखिया की लड़की लास्यवती ने खेला था। लास्यवती सचमुच मोहिनी थी। उसका सौन्दर्य, अभिनय, आदि देखकर उग्रभट मुग्ध हो गया। नाटक मण्डली के मुखिया से उसने कहा कि वह उसकी शदी उससे करे। वह तुरन्त मान गया। लास्यवती राढ़ा नगर के राजा की छोटी रानी बन गई।

थोड़े दिनों बाद, मनोरमा को एक लड़का, और लास्यवती को एक लड़का पैदा हुआ। राजा ने मनोरमा के लड़के का नाम भीमभट और लास्यवती के लड़के का नाप समरभट रखा। दोनों में भीममट कुछ बड़ा था।

दोनों राजकुमार बड़े होने लगे, पर यह देखा गया कि हर विषय में भीमभट ही समरभट से आगे रहता। यह देख समरभट अपने भाई से ईर्ष्या करता। जब वे दोनों एक दिन कुश्ती लड़ रहे थे, तो समरभट ने जानबूमकर, भीमभट के गालों पर चपत मारी। फिर भीममट ने, जो वस्तुतः उससे अधिक बलवान था, उसकी मरम्मत कर दी। समरभट के मुख और नाक से खून बहने लगा। वह नीचे गिर गया। उसे दोस्त उठाकर उसकी माँ के पास ले गये।

लास्यवती लड़के की हालत देखकर खूब रोयी-चिल्लाई। इतने में राजा भी आया और उसने सारी बात मालूम कर ली।

भीमभट, मेरे लड़के को, जब कभी मौका मिलता है, पीटता रहता है। मैंने आपसे कभी न कहा। मुझे डर है कि वह कभी न कभी मेरे लड़के को मार देगा।" लास्यवती ने रोते रोते राजा से कहा। राजा को अपनी छोटी रानी पर और उसके लड़के पर अधिक प्रेम था। इसलिये उसने अपने बड़े लड़के को आज्ञा दी कि वह राजमहल छोड़कर चला जाए।

यह सुन बड़ी रानी मनोरमा की आँखों में आँसू आ गये। भीमभत से कहा-"बेटा, तेरे बारे में छोटी रानी और उसका लड़का चुगली करते हैं, राजा उन पर विश्वास कर लेते हैं। इसलिये तेरा यहाँ रहना अच्छा नहीं है। महल छोड़ किसी और के घर में रहने की तुझे क्या पड़ी? अपने नाना के घर रह। उनके सन्तान नहीं है; इसलिये तुझे बड़े प्रेम से रखेंगे।"

भीम को यह सुनकर क्रोध आया। उसने कहा-"माँ, यह क्या कह रही हो? क्या समरभट के डर से में देश छोड़कर चला जाऊँ? क्या मैं क्षत्रिय



का लड़का नहीं हूँ? वह मेरा कुछ नहीं कर सकता।"

"ऐसी बात है तो तू जितना भी धन चाहे में देने के लिये तैयार हूँ। जितनी सेना तुझे चाहिये, तू इकट्ठी कर ले। मैं तेरी मदद करूँगी।" मनोरमा ने कहा।

"नहीं माँ। ऐसा करना मुझे राज-द्रोह सा लगता है।" कहते हुए भीमभट ने माता से विदा ली, और वह अन्तःपुर छोड़ कर चल गया।

जब जनता को यह मालूम हुआ कि राजा ने अपने बड़े लड़के को घर से बाहर कर दिया है तो राजा की वे निन्दा करने

लगे। क्योंकि जनता भलीभाँति जानती थी कि समरमट किसी भी तरह राजा बनने लायक न था। इसलिये जनता ने आपस में चन्दा इकट्ठा कर भीममट के रहने की हर सुविधा कर दी।

भले ही प्रजा भीममट को चाहती हो, पर समरभट को राजा चाहता था। इसलिये उसने अपने भाई को मरवाने के लिए कई पैंतरे खेले। यह देख संखदत्त नाम के ब्राह्मण को बहुत रञ्ज हुआ।

संखदत्त की उम्र भी राजकुमारों की उम्र जितनी थी। यद्यपि वह ब्रह्मण था, पर वह बहुत पराक्रमी था। वह दोनों राज-कुमारों का मित्र था। इसलिये उसने एक दिन समरभट से कहा-"क्यों तू अपने भाई से झगड़ता है? तू उसको जीत नहीं सकता। अगर तू उसका बुरा करेगा, ब्यर्थ तेरी ही अपकीर्ति होगी। अब तक जो तूने किया है, उसकी प्रजा कैसे निन्दा कर रही है, क्या तू नहीं जानता?" उसने उसे समझाया बुझाया।

यह बात सुन समरभट का रास्ते पर आना तो अलग, वह उसको उल्टा खरी-खोटी सुनाने लगा।



"खैर, मैंने तुझे अच्छी सलाह दी, और तुझे वह जहर-सी लगी। अगर भीममट तेरा जानी दुश्मन है, तो मुझे भी जानी दुश्मन समझ। क्योंकि मैं आज से तेरा मित्र नहीं हूँ। दोनों को मित्र समझ कर मैंने सलाह दी थी और तूने मुझे गलत समझा। इसका फल तुझे भोगना पड़ेगा।" शंखदत्त यह कहकर चला गया।

इस घटना के कुछ दिनों बाद, राढा नगर में एक व्यापारी पञ्चकल्याणी घोड़ा बेचने आया। यह पता लगते ही शंखदत्त ने भीमनट के लिए उसका भाव-ताव किया। यह बात समरभट तक भी पहुँची। अपने नौकर-चाकरों के साथ, व्यापारी के पास जाकर उसने कहा-"तेरा घोड़ा मैं दुगने दाम देकर खरीदूँगा। मुझे दे दे।"

"हुजूर! हमें व्यापार में ईमान्दारी बरतनी चाहिये। जब एक को भाव दे दिया है तो पैसे के लालच में उसे किसी और को नहीं बेच देना चाहिये। आप ही बताइये !" व्यापारी ने कहा।

"तुम इतने ईमान्दार हो। अरे, देखते क्या हो? घोड़े को भगा ले जाओ।" उसने नौकरों को हुक्म दिया। वे घोड़ा खोलकर ले गये।





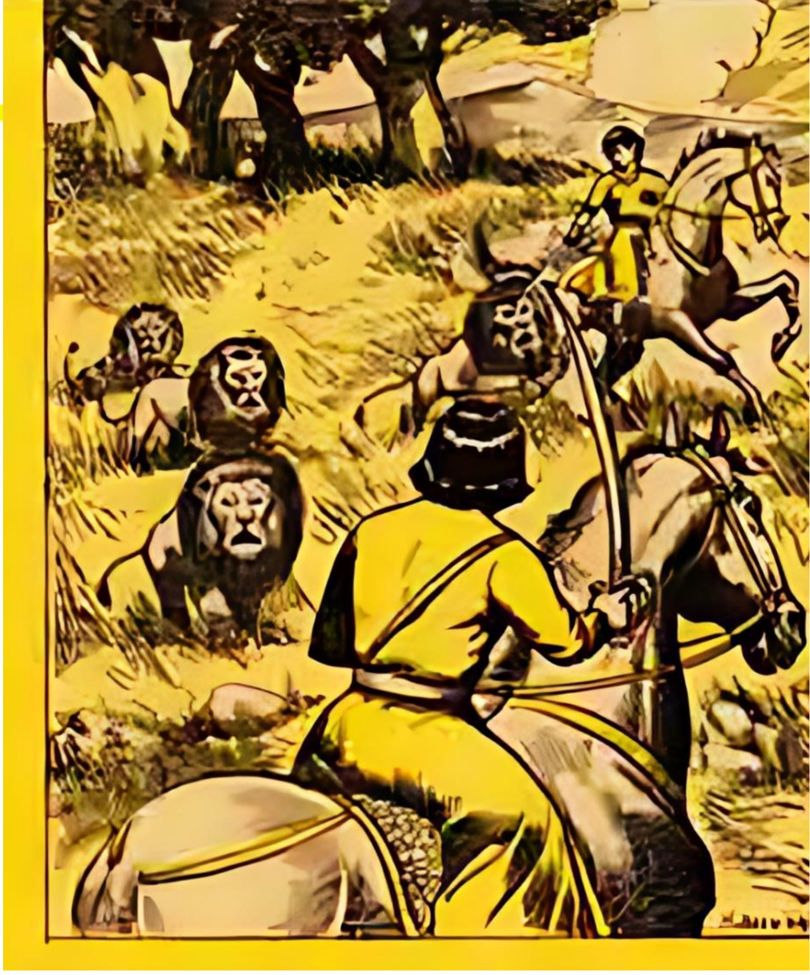
समरभट ने अपने पिता के पास जाकर शिकायत की कि भीमभट ने उसके नौकरों को मार दिया है, उसको भी मारना चाहा था, और उसका खरीदा हुआ पञ्चकल्याणी भगाकर ले गया है।

यह बात भीमभट और शंखदत्त को भी मालूम हुई। वे दोनों तलवार लेकर पहुँचे। समरभट के नौकरों में और उनमें युद्ध हुआ। दोनों ने मिलकर नौकरों को मार

दिया। समरभट भी अपनी जान बचा कर मैदान छोड़कर भागने लगा। पर शंखदत्त ने उसको दौड़कर पकड़ लिया। उसके बाल पकड़कर वह उसका सिर काटने को ही था कि भीममट ने आगे बढकर परिहास करते कहा -"उसे मत मारो। फिर हमारे पिता जी का क्या होगा? अब है ही उनका एक लड़का।" शंखदत्त ने "जा, बची तेरी जान" कहकर उसे छोड़ दिया।

यह बात मालूम होते ही मनोरमा ने एक हँडिया में कुछ रत्न रखे और उस हँडिया को एक ब्राह्मण को देकर कहा-"यह बिना किसी के जाने मेरे लड़के के पास पहुँचा देना, और उससे कहना कि मैंने कहा है कि वह आज ही, यह देश छोड़ कर मेरे पिता के देश चला जाय। कहना कि कल वह इस राज्य में रहा तो उसके प्राण न बचेंगे। इस धन का वह अपना बदला लेने के लिए उपयोग कर सकता है।"

भीमभट, माँ के कथनानुसार उसी रात को निकल पड़ा। वह हँडिया लेकर पञ्चकल्याणी पर सवार हो गया। उसके दुःख-पुख में साथ देनेवाला शंखदत भी एक और घोड़े पर चढ़ उसके साथ साथ ही निकला। सबेरे होते होते दोनों शहर से बाहर निकल गये।



अगले दिन वे दुपहर को एक मैदान में पहुँचे। वहाँ सरकण्डे खूब बढ़े हुए थे। जब उनके घोड़े उनमें से दौड़ने लगे, तो उनकी भावाज़ सुन, वहाँ सोते शेर जाग उठे और उन पर हमला करने लगे। भीमभट और संखदत्त ने बहादुरी से शेरों को मार दिया। पर चूँकि शेरों के हमले से उनके घोड़े बुरी तरह घायल हो गये थे, इसलिए वे देखते देखते वहीं मर गये।

उन्हें पैदल जाना पड़ा। सरकण्डों के कारण पैर कट रहे थे। उनको यह भी न मालूम था कि वहाँ कितने और शेर थे। फिर अन्धेरा भी हो रहा था। वे चलते गये। रात भर चलने के बाद वे गङ्गा नदी के किनारे पहुँचे।

गङ्गा भरी हुई थी। आसपास कोई नहीं दिखई देता था। नदी पार करने के लिये भी वहाँ कुछ न था। किनारे पर चलते चलते थेड़ी दूर पर उनको एक कुटीर दिखाई दिया। उसमें केवल एक युवक था। मालूम हुआ कि युवक ने कशी में पढ़ा-लिखा था। जब वह पढ़-लिखकर अपने गाँव में पहुँचा तो भाई-बन्धु, सब मरमरा चुके थे। बेचारे अनाथ, गरीब को कौन अपनी लड़की विवाह में देता? इसलिये उसे बैराग्य हो गया और वहाँ एक कुटीर बनाकर, वह तपस्या कर रहा था।

यह जानकर भीममट ने रत्नों से भरी हँडिया उसको देकर कहा-"जाओ, तुम इसे ले जाकर आराम से विवाह करो, हमारे लिये इसको ढ़ोना मुश्किल हो रहा है।"

इसके बाद, दोनों मित्रों ने हिम्मत कर गङ्गा तैरकर पार करना चाहा। पर बहाव बहुत तेज था, बहाव के साथ वे भी बहने लगे। बहुत दूर बह जाने के बाद, भीमभट

पहले किनारे पर लगा। संखदत्त कहीं दिखाई नहीं देता था। न जाने उसे क्या हो गया था। उसको नदी किनारे खोजता खोजता, वह लाट देश पहुँचा।

इस तरह माँ, मातृ-भूमि राज्य, धन, मित्र को छोड़कर, भीमभट ने निम्सहाय हो लाट नगर में पैर रखे ही थे कि उसको कुछ युवक जुआ खेलते हुये नज़र आये। भीमभट भी उनसे जुआ खेलने लगा। उनका ख्याल था कि जो कुछ उसके पास था, वे उसको जीत लेंगे, पर हुआ उल्टा ही। भीमभट ने थोड़ी देर में उनका सब कुछ जीत लिया। सब जुआड़ी थे। उनसे भीमभट ने कहा- "दोस्तो! मैं कोई जुआखोर नहीं हूँ। अपना धन लेते जाओ।"

"तो तुमने हम से जुआ क्यों खोला ?" उन्होंने पूछा।

"मैं अकेला हूँ। आपसे मैत्री करने के उद्देश्य से ही मैंने ऐसा किया है।" भीमभट ने कहा। यह सुन वे सन्तुष्ट हुए। वे उसके दोस्त भी बन गये।

कुछ समय बीता। लाट देश में प्रति वर्ष नागोत्सव मनाया जाता था। भीमभट



भी अपने मित्रों के साथ उत्सव देखने गया। वहाँ उसे उस देश की राजकुमारी दिखाई दी। भीमभट को उसके साथ विवाह करने की इच्छा हुई।

यह जान उसके दोस्तों ने, भीमभट को राजा की पोशाक पहनाई और स्वयं सामन्तों की वेषभूषा धारण कर राजा को देखने गये। जब राजा को यह मालूम हुआ कि भीममट राढ़ा देश के राजा का लड़का है, तो वह बहुत खुश होकर तुरन्त मान गया और अपनी लड़की की उससे धूमधाम से उसने शादी कर दी।

शंखदत्त भी गङ्गा पार कर गया, और अपने मित्र को खोजने लगा। जब लोगों के मुँह सुना कि भीममट ने लाट देश की राजकुमारी के साथ विवाह कर लिया है, तो वह भी उसे खोजता खोजता लाट देश पहुँचा। अपने खोये हुये मित्र को देखकर भीमभट को अत्यधिक आनन्द हुआ।

थोड़ा समय और बीता। लाट देश के राजा के दो लड़कियों के सिवाय कोई सन्तान न थी। इसलिये भीमभट लाट देश का राजा हो गया। उधर उग्रभट भी मर गया, और समरभट राड़ा नगर का राजा



बना। भीमभट ने अपने भाई के पास दूत द्वारा यह कहला भेजा-"नीच! तू सिंहासन पर बैठने लायक नहीं है। सीधे ढङ्ग से या तो राज्य मुझे वापस दे दे, नहीं तो युद्ध के लिए तैयार हो जा।"

समरभट युद्ध के लिए तैयार हो गया। भीमभट ने अपने मित्रों से कहा कि वे युद्ध के लिए तैयार हो जायें। उन्होंने अच्छी सेना जमा कर ली। भीमभट ने सेना लेकर राढा नगर पर आक्रमण किया।

घमासान युद्ध हुआ। युद्ध में दोनों भाई भीड़ पड़े। दोनों एक दूसरे के बाहनों को बाणों से छेदने लगे। आपस में बाण काटने लगे। फिर तलवार लेकर लड़ने लगे। थोड़ी देर में, भीमभट ने समरभट के हाथ की तलबार उड़ा दी। भीमभट की तलवार पर समरमर का सीना लगा। वह भय से काँपने लगा।

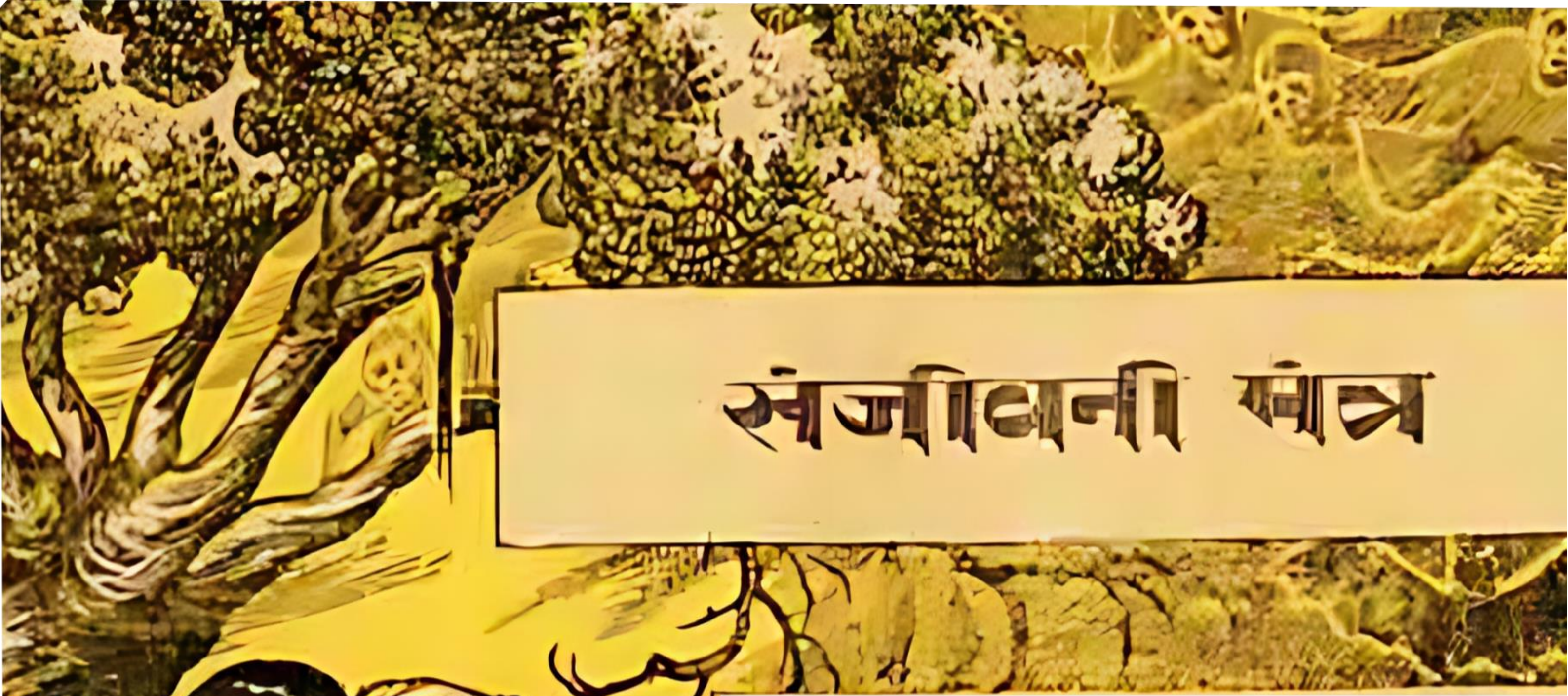
"डरपोक! मैं तुझे नहीं मारूँगा। अगर मैं तुझे मार दूँ तो तेरी माँ का क्या होगा, जिसने तुझे इनने लाड़-प्यार से पाला पोसा है? जा, जीते जी अपनी शक्ल उसको दिखा आ।" भीमभट ने कहा।

आखिर भीमभट राढा नगर की गद्दी पर बैठा। उसकी रक्षा के लिए अपनी जान तक देने का तैयार रहने वाले अपने मित्रों का उसने आदर किया और लाट देश की दूसरी राजकुमारी से संखदत्त का विवाह करवाया। उसको लाट देश भी भेंट में दे दिया। बाकी मित्रों को उसने अपने सामन्त बना लिये।

जिस जगह एक समय वह राजा था, समरभट अब एक मामूली आदमी की तरह रहना नहीं चाहता था। वह अपनी के साथ कहीं और जगह चला गया।



संजीवनी मंत्र





विक्रम, पेड़ पर से फिर शव को उतार कर और कन्धे पर डालकर, सन्यासी की तरफ चल पड़ा। तब शव में स्थित वेताल ने राजा से कहा-

"राजा, तुम्हारी क्या बुरी हालत हुई है। तुम्हारा मन बहलाने के लिये मैं एक कहानी सुनाता हूँ; सुनो। "

यमुना नदी के किनारे ब्रह्मस्थल नामक ब्राह्मण-ग्राम में अभिस्वामी नाम का वेदपाठी रहा करता था। उसकी एक लड़की थी, नाम था मन्दारवती। वह इतनी सुन्दर थी कि अप्सराओं को भी सौन्दर्य में मात करती थी। वह उसका विवाह करने की सोच ही रहा था कि कहाँ से तीन ब्राह्मण युवक आये और तीनों बड़ बढ़कर कहने लगे कि वे



मन्दारवती से विवाह करेंगे। यदि वे विवाह न कर सके तो आत्म-हत्या कर लेंगे। वे चारों सौगन्ध खाने लगे। ब्राह्मण यह देखकर हैरान हो गया।

तीनों युवक शिक्षा-दीक्षा में, सौन्दर्य, चरित्र, वगैरह में समान थे। इसलिए ब्राह्मण को यह डर सताने लगा कि अगर उनमें से किसी एक को भी यह अपनी पुत्री विवाह में देता है, तो शेष दो आत्महत्या कर लेंगे। इसलिए वह चुप रहा।

इधर, मन्दारवती को यकायक भयङ्कर ज्वर हुआ और वह थोड़े दिनों में ही मर गयी। तीनों युवक उसकी मृत्यु पर दुःखी हुए और उसके शव को श्मशान ले जाकर, तीनों ने यथाविधि उसका अन्त्येष्टि संस्कार किया। उनमें से एक श्मशान से वापिस न आया। जहाँ मन्दारवती दहन की गयी थी, वहीं उसने एक झोपड़ी बना ली और उसी की चिता की भस्म पर वह रहने लगा। जो कोई कुछ लाकर देता तो उसे खाकर तसल्ली कर लेता। नहीं तो वह वहीं मूखा-प्यासा पड़ा रहता।

दूसरा युवक, मन्दारवती की हड्डियाँ जमा गङ्गा में मिलाने के लिए निकल पड़ा। तीसरा युवक पूरी तरह बैरागी बन गया और देश-देशान्तर में घूमने-फिरने लगा। वह घूमता-घूमता एक दिन बक्तोलक नामक गाँव में पहुँचा। वहाँ एक ब्राह्मण ने उसका अतिथि सत्कार किया। जब वे भोजन के लिए बैठे, तो घर का छोटा बालक हिचकियाँ भर-भरकर रोने लगा। माँ ने भोजन परोसते परोसते उसको बहुत मनाया-समझाया। पर उसने रोना बन्द न किया। इसलिए घरवाली ने उसको जलते चूल्हे में डाल दिया। वह छोटा बालक देखते देखते चूल्हे में राख हो गया।

ब्राह्मण युवक यह सब देख रहा था। वह चिल्लाया-"छी! तुम मनुष्य नहीं हो, राक्षस हो। तुम्हारा आतिथ्य स्वीकार कर मैं भी नरक जाऊँगा।" कहता कहता, वह पत्तल छोड़कर उठ गया।

परन्तु मेजबान ने कहा-"बेटा! जल्दी मत करो। हम राक्षस नहीं हैं। ऐसी बात नहीं कि हमें अपने बच्चे पर प्रेम नहीं है। क्योंकि उसको फिर जिला देने के लिये, हम मृत सञ्जीवनी मन्त्र जानते हैं। इसलिये मेरी पत्नी ने उसको चूल्हे में डाल दिया है।

ब्राह्मण युवक को विश्वास न हुआ। इसलिये उस ब्राह्मण ने थोड़ी-सी धूल ली, खूँटी पर टँगी एक पुस्तक को निकालकर, उसमें से उसने एक मन्त्र पढ़ा, उस धूल के चूल्हे की राख में छिटकते ही, वह बच्चा पुनः जीवित हो गया।

ब्राह्मण युवक ने सन्तुष्ट होकर भोजन किया। परन्तु उसका मन खूँटी पर लटकी पुस्तक पर ही था। जब रात को सब सो रहे थे, उसने वह पुस्तक ली, बिना किसी को कहे सुने, वह ब्रह्मस्थल पहुँच गया।

वह ब्राह्मण युवक भी, जो मन्दारवती की अस्थियाँ गङ्गा में मिलाने गया



था, वापिस आ गया था। दोनों मिलकर तीसरे युवक के पास गये, जो श्मशान में रह रहा था।

उस ब्राह्मण युवक ने जो मृत सञ्जीवनी मन्त्र लाया था, उसके बारे में, दोनों युवकों को भी बताया। उसने फिर चुटकी भर धूल ली, पुस्तक में से मन्त्र पढ़ा, और उस धूल को उस भस्म पर डाल दिया, जिसको तीसरे युवक ने शय्या बना रखा था।

तुरन्त मन्दारवती स्वस्थ होकर जीवित हो उठी, मानों नींद से जागी हो।

तीनों ब्रह्मचारी उसको साथ लेकर अग्निस्वामी के पर जाकर कहने लगे-"इसका विवाह मुझ से करो" "इसका विवाह मुझ से करो"। वे उसे इस तरह तङ्ग करने लगे।

"मैं मृत सञ्जीवनी मन्त्र लाया था, इसलिये मन्दारवती से विवाह करने का अधिकार मेरा है।" एक कहता।

"मैंने उसकी हड्डियाँ ले जाकर गङ्गा में मिलायी, उसके जी उठने का यह भी एक कारण है। मुझे ही उससे विवाह करना चाहिये।" दूसरे युवक ने कहा।

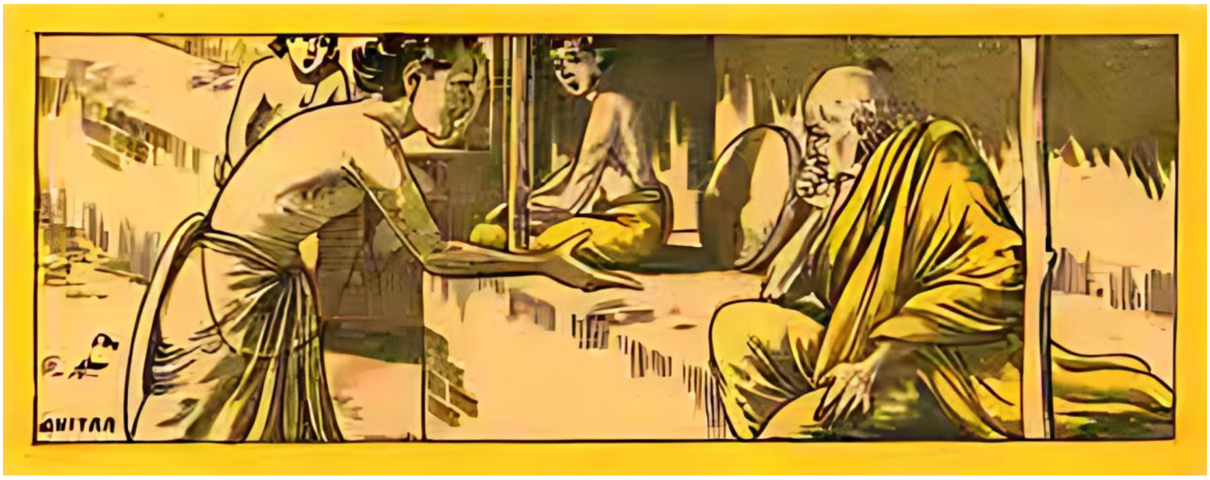
"मैंने ही उसकी राख को सुरक्षित रखा, मैं ही उस पर सोया था, उससे में शादी करूँगा।" तीसरे युवक ने कहा।

अग्निस्वामी फिर दुविधा में पड़ा कि किसके साथ अपनी लड़की का विवाह करे। उसे कोई रास्ता न दिखाई दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर राजा से पूछा-"राजन्! उन तीनों में कौन मन्दारवती से विवाह करने योग्य था? वह जो कि मृत सञ्जीवनी मन्त्र लाया था या वह जो अस्थियाँ गङ्गा में मिलाने गया था या वह जिसने उसकी चिता की राख पर सोता था? अगर तुमने जान बूझकर न बनाया तो तुम्हारा सिर फोड़ दूँगा।"

"मृत सञ्जीवनी मन्त्र के लाने के बावजूद भी प्राण देनेवाला पिता होता है। अस्थियों का गङ्गा में मिलानेवाला भाई होता है। वही सचमुच मन्दावनी का पति है, जो उसकी चिता की राख पर पड़ा रहा और उसको पहले की तरह प्रेम करता रहा।" राजा ने कहा।

इस तह राजा का मौन भङ्ग होते ही, बेताल सब के साथ भागकर फिर पेड़ पर चढ़ बैठा। विक्रमार्क देखता रह गया।





उन दिनों हरून आल रशीद बग़दाद का खलीफा था। सारे मुल्क में कबूतरों के जरिये डाक पहुँचाई जाती थी। जो यह काम करता था, वह बहुत बड़ा शख़्स था। खलीफा उसको अपने लड़के की तरह मानता था। उसको हज़ार दीनार माहवारी देता था। अलावा इसके, उसको कई खिताब भी दे रखे थे।

वह शख्स एक दिन गुज़र गया और कबूतरों द्वारा डाक पहुँचाना भी बन्द ही गया। उसने इस काम के लिए, जो चालीस गुलाम और चालीस शिकारी कुत्ते रख रखे थे, उनको खलीफा ने ले लिए।

कबूतर की डाक चलानेवाले की एक माँ थी और एक लड़की। स्त्री का नाम दिलैला था और लड़की का जीनाब। उसने खलीफा के पास दरख्वास्त भेजी कि वह अपने पति की जगह कबूतरों के द्वारा डाक भेजने का इन्तजाम करेगी और उसको भी वही बेतन दिया जाना चाहिए जो उसके पति को मिलता आया था। खलीफा ने उसकी दरख्वाश्त रद्द कर दी। वह दिलैला की अक्लमन्दी को न जान सका।

कुछ दिनों बाद खलीफा ने दो डाकुओं को कोतवाल नियुक्त किया। उनमें से एक का नाम था अहमद, और दूसरे का नाम था हसन। दोनों पहुँचे हुये डाकू थे। परन्तु खलीफा ने यह समझा कि चालाक डाकुओं को अगर कोतवाल बना दिया गया तो डाकू कम हो जायेंगे।

जब दिलैला को यह मालूम हुआ कि उसी खलीफा ने, जिसने उसकी दरख्वास्त रद्द कर दी थी, दो चोरों को कोतवाल बनाया है, वह आग-बबूला हो उठी।

कुमारी रज़िया रेहाना



अगर इस देश में चोर, डाकू डकैतों की ही पूछ होती है, तो क्या हम कोई कम हैं? देखना, ये अहमद और हसन मेरे सामने क्या कर पाते हैं।" दिलैला ने अपनी लड़की जीनाब से कहा।

दिलैला बूढ़ी थी, पर अक्ल में वह बहुत तेज थी। उसकी लड़की जीनाब भी उससे किसी क़दर कम न थी। माँ की प्रतिज्ञा सुनकर वह बहुत खुश हुई। दिलैला ने निश्चय किया कि वह सारे शहर को हिला देगी। उसने सूफ़ी सन्यासिनी का बेष धरकर चेहरे पर बुरका डाल लिया। गले में कई सारे ताबीज बाँध लिये। हाथ में सूफी भिखारियों की एक छड़ी ले ली। वह घर से निकली।

बगदाद के बड़े लोगों में से एक खलीफा के अङ्गरक्षकों का सेनापति भी था; उसका नाम मुस्तफा था। उसको बहुत बड़ा वेतन मिलता था। उसके घर में चन्दन के दरवाजे थे और उन पर चाँदी के ताले लगते थे। उसकी पत्नी भी बहुत सुन्दर थी। उसका नाम खातून था। यद्यपि वह बाँझ थी, तोभी मुस्तफा उस पर जान देता था। उसने दूसरी शादी भी न की थी। जब वह दूसरों के लड़कों को देखता, तो वह दिल मसोस कर रह जाता।

परन्तु हमेशा खातून को यह फिक्र सताती रहती कि वह बाँझ है। वह यह भी जानती थी कि उसका पति बच्चों के लिए तड़प रहा है। सन्तान के लिए उसने कितनी ही दवा-दारू करवायी, पूजा-पाठ करवाये पर कुछ फायदा न हुआ।

दिलैला "अल्लाह! अल्लाह!" चिल्लाती गली-गली फिरती थी। जब वह मुस्तफा के घर के पास पहुँची, तो उसे मकान के दूसरे मञ्जिल पर खातून दिखायी दी।

वह बहुत सारे गहने पहने दुल्हिन सी लगती थी। अगर मैं इस लड़की को उठाकर न ले गयी और मैंने इसके गहने न हथिया लिये, तो मेरी अक्ल भी किस काम की....?" दिलैला ने सोचा।

दिलैला को देखते ही खातून के मन मैं भी आशा पैदा हुई। इस सूफी सन्यासिनी के दर्शन से शायद उसको सन्तान प्राप्ति हो जाय....! यह सोचकर खातून ने अपनी दासी को उसे बुलाने के लिए भेजा।

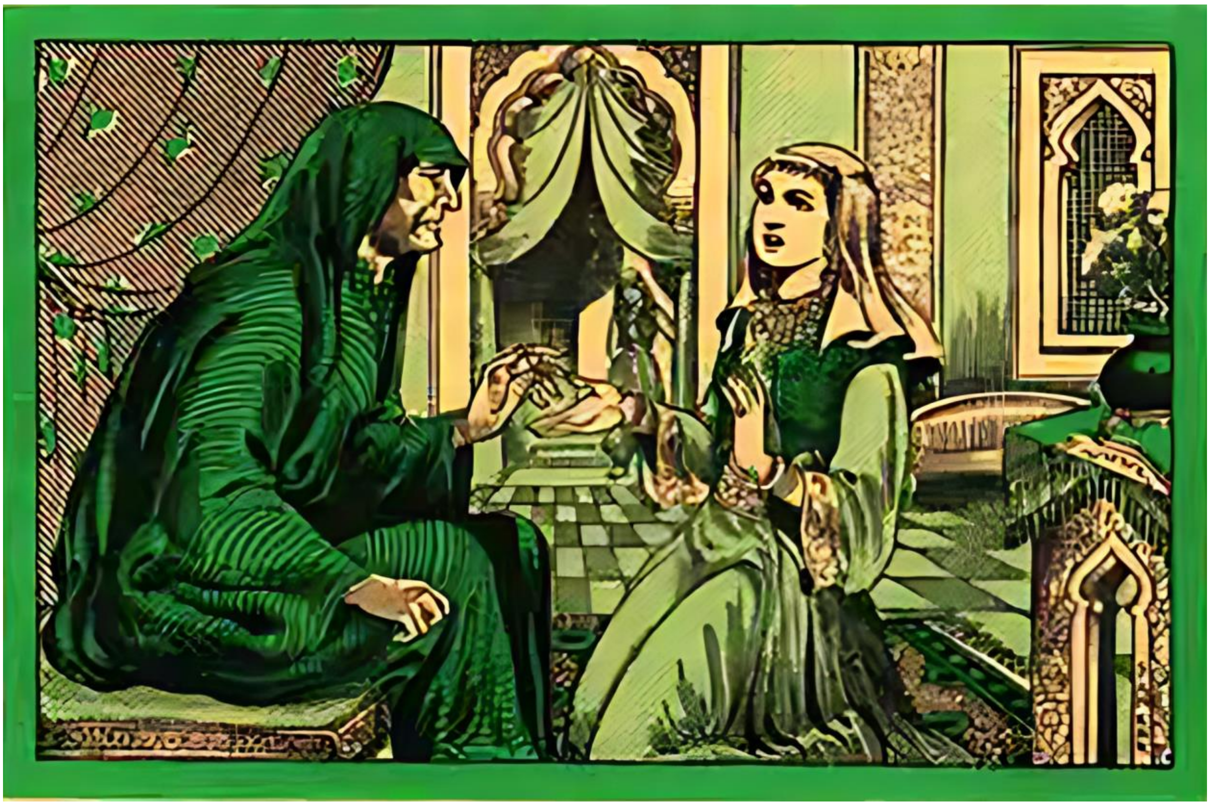
दिलैला के ऊपर आते ही, खातून उसके पैरों पर पड़ अपना रोना रोने लगी।

दिलैला ने कहा-"इसी शहर में सन्तान प्रदान करनेवाला एक साधु है। अगर तूने उनके एक बार दर्शन किये, तो तेरी इच्छा-पूर्ति के लिए वह कुछ न कुछ बतायेगा।"

"मैं तो कभी भी घर से बाहर नहीं गयी हूँ।" खातून ने कहा।

"खैर! तू मेरे साथ अभी आ जा। मैं तुझे साधु के पास ले जाऊँगी। तेरे पति के घर वापिस आने से पहले तू यहाँ आ सकती है।" दिलैला ने सुझाया।

यह सोचकर कि उसकी इच्छा पूरी होने जा रही है, खातून ने अपने और





गहने भी पहन लिए और दिलैला के साथ निकल पड़ी। जब वे थोड़ी दूर गयीं, तो उन्हें सिही मोहसिन की दुकान दिखायी दी। वह नौजवान था, उसकी अभी शादी भी न हुई थी। दिलेला को एक चाल सूझी। उसने खातून को बाहर बराण्डे में बैठाया और खुद अन्दर चली गयी।

"यह जो खूबसूरत औरत दिखायी दे रही है, वह मेरी लड़की है। तुम जैसे अक्लमन्द को देखकर उसकी शादी करने की मेरी मर्जी हो रही है। उसका पिता व्यापार में खूब कमाकर उसे बहुत कुछ दे गया है; इसलिए तुम्हारा कोई नुकसान नहीं होगा। ढेर-सा दहेज दूँगी।" दिलैला ने मोहसिन से कहा।

मोहसिन बड़ा खुश हुआ-"तो क्या शादी यहीं निश्चित कर लें?" उसने पूछा। दिलैला ने कहा कि अगर वह उसके साथ आया तो उसकी शादी तुरन्त निश्चित की जा सकती है। मोहसिन हज़ार दीनारों से भरी एक थैली लेकर उसके साथ साथ चल दिया।

दिलैला, जब इस तरह खातून, मोहसिन को साथ लेकर जा रही थी, तो उसे रङ्गरेज़ हज़ मोहम्मद की दुकान दिखाई दी। दिलैला ने खातून और मोहसिन को दूर खड़ा कर उससे कहा-"ये जो आपको दिखाई दे रहे हैं, वे मेरे लड़के और लड़की हैं। हमारा घर गिरनेवाला था, इसलिये उसकी मरम्मत की जा रही है। यहाँ कोई खाली मकान मिलेगा? हम पाँच-दस दिन ठहरना चाहते हैं।"

उसने सोच-विचारकर कहा- "हमारे घर का उपरला हिस्सा खाली है। मैं नीचे रहता हूँ। नील के व्यापारियों के ठहरने के लिये मैंने वह हिस्सा खाली छोड़ रखा

है। आजकल वे नहीं हैं। अगर चाहिये तो ले लो। ये रही चाबियाँ।" उसने कहा।

दिलैला तब बाकी व्याक्तियों को साथ लेकर हज मोहम्मद के घर गई। निचला हिस्सा खोलकर उसने मोहसिन को अन्दर जाने का इशारा किया। वह खातून के साथ उपरले हिस्से में चली गई।

"मैंने जिस साधु के बारे में कहा था वह यहीं नीचे रहता है। में जाकर तेरे बारे में उसको बताकर आती हूँ। इस बीच में अपने गहनों की गठरी बाँधकर साधु का दर्शन करने के लिये तैयार रह। उनके पास गहने पहन कर जाना गुनाह है।" दिलैला यह कह नीचे चली गई। मोहसिन ने उसको देखते ही पूछा-"क्या शादी तय हो गई है?"

दिलैला झूठमूठ रोने लगी। उसने कहा-"मैं क्या करूँ? किसी भूर्त ने तेरे बारे में उससे चुगली कर दी है। कह दिया है कि तुझे दाद है। वह तुझसे अब शादी नहीं करना चाहती। तू अपना कुर्ता उतारकर बैठ जा। उसे लाकर तुझे दिखाऊँगी, और शादी के लिये मना



लूँगी। तू अपना बैला और कुर्ता मुझे दे दे। ऊपर हिफाजत से रख दूँगी।"

मोहसिन ने दीनारों की थैली और कुर्ता उसको सौंप दिया। उसने ऊपर जाकर स्वातून से कहा-"तेरे लिये साधु इन्तज़ार कर रहा है। तेरा भाग्य जान ले, अब जग गया है। मैं तेरी गहनों की गठरी रखकर अभी आती हूँ।" खातून नीचे उतरकर अन्दर गई। दिलैला उसके पीछे पीछे दोनों गठरियाँ लेकर उत्तरी और सीधे गली में चली गई।

स्वातून ने कमरे में देखा। उसे साधु तो कहीं न दिखाई दिया। परन्तु कुर्ता उतारे मोहसिन वहाँ बैठा था। उसने उसे

देखते ही कहा-"देख ले, मेरे शरीर पर एक भी दाद नहीं है।" खातून डर गई और ऊपर भागकर अन्दर से कमरा बन्द कर लिया। उसको वहाँ न सूफी सन्यासिनी दिखाई दी, न गहनों की गठरी ही।

इस बीच में, दिलैला गठरियों को जान पहचान के एक दुकानदार के पास रखकर रङ्गरेज़ की दुकान पर गई। "घर बड़ा अच्छा था। आपने हमारी बड़ी मदद की। दोनों बच्चों को भूख लग रही है। जरा उनके लिये कुछ ले जा सकेंगे? यह लीजिये एक दीनार आप अपने खाने के लिये भी कुछ खरीद लीजियेगा। मैं घर जाकर सामान बँधवाकर लिवा लाती हूँ।"

हज मोहम्मद दुकान पर एक नौकर को बिठाकर चल पड़ा। दिलैला भी अपनी छुपाई गठरियों को लेकर थोड़ी देर में वापिस आ गई। उसने नौकर से कहा-"तेरा मालिक उस ढावे में है। तुझे तुरन्त बुला रहा है। तेरे वापिस आने तक मैं रहूँगी।" नौकर भी चला गया। दिलैला ने, दुकान में जो कुछ समान लेने लायक था, चुनकर एक तरफ रख दिया। दूकान के सामने गधे हाँककर ले



जानेवाले लड़के को देखकर उसने कहा-"तू तो दुकानदार को जानता ही होगा। यह मेरा लड़का है। कर्जवाले मेरे लड़के को पकड़कर ले गये हैं। यह समान दूसरों का है। उनको वापिस दे देना है। यह सामान अपने गधे पर ढोकर मेरे साथ चलेगा न? यह ले एक दीनार। मेरे वापिस आते आते तेजाब की सब चीजों को तोड़ देना।"

गधेवाला मान गया। दिलैला गधे पर सारा समान ढोकर अपने घर चली गई। माँ को देखते ही जीनाव ने पूछा-"माँ क्या करके आई हो?"

"चार की आँखों में धूल झोंककर आई हूँ। यह एक अधिकारी की पत्नी के गहने हैं। ये एक दुकानदार की थैली और कुर्ता हैं और ये सब नील के व्यापारी का माल है। यह गधा चौथे आदमी का है।" दिलैला ने घमण्ड के साथ कहा।

"यह सब तो ठीक है। माँ, अब तुझे घर से नहीं हिलना चाहिए। वे चारों तेरी तलाश में होंगे।" जीनाव ने कहा।

"अरे पगली! अभी तो आधा काम भी नहीं हुआ है। सब देखती रहना।"



जब वह रङ्गरेज़ ढावे में रोटी खरीद रहा था, तो नौकर ने पूछा-"क्यों बुलाया है?" उसको शक हुआ। जब यह दुकान पर पहुँचा तो गधेवाले लड़का सारी चीजें तहस-नहस कर रहा था।

"यह क्या कर रहा है। हो सत्यानाश तेरा।" दुकानदार ने कहा।

"महाजनों ने आपको छोड़ तो दिया?" गधेवाले लड़के ने कहा।

उन दोनों को एक दूसरे का मतलब समझने के लिए काफी देर लगी। आखिर रङ्गरेज़ ने पूछा-"वह बुढ़िया कहाँ है?"

और गधेवाले ने पूछा-" मेरा गधा कहाँ है?" वे बक-झक करने लगे। आसपास के लोग इकट्ठे हो गये। सब मिलकर रङ्गरेज के घर गये।

जब उसके मकान का निचला हिस्सा खटखटाया गया, तो कुर्ता बिना पहने मोहसिन ने दरवाज़ा खोला। "कहाँ है गधे, तेरी माँ....?" रङ्गरेज चिल्लाया। "मेरी माँ को गुज़रे हुए तो जमाना हो गया है।" मोहसिन ने कहा। उन दोनों को आपस में समझने के लिए और थोड़ा समय लग गया। आखिर मोहसिन ने कहा-"वह बुढ़िया अपनी लड़की की मुझसे शादी करने के लिए, मुझे बुलाकर लायी थी। वे लोग ऊपर हैं।"

रङ्गरेज़ सीढ़ी चढ़कर ऊपर गया। खटखटाने पर खातून ने किवाड़ खोले। "तुम्हारी माँ कहाँ है?" व्यापारी ने पूछा। "मेरी माँ को मरे हुए तो बहुत दिन हो गये हैं।" खातून ने कहा।

चारों ने जब आपस में सोचा समझा तो उनको मालूम हो गया कि उनको धोखा दिया गया है। उन्होंने खातून को घर भेज दिया और शहर के रक्षक, खलीफा के पास आकर तीनों ने शिकायत की।

खलीफा ने अचरज से उनकी शिकायत सुनकर कहा-"तुम्हारी हालत देखकर मुझे दया आती है। परन्तु इस शहर में रहनेवाली बुढ़ियाओं में से मैं कैसे उस बुढ़िया को खोज निकालूँ, जिसने आप लोगों को धोखा दिया है? अगर आपने जैसे तैसे उसे पकड़ लिया, तो मैं उसे जरूर सजा दूँगा।" कोई चारा न था, वे तीनों बुढ़िया को खोजने निकल पड़े।

(अभी और है।)





किसी जमाने में मगध देश पर चतुरङ्गवीर राज्य करता था। वह शतरञ्ज खेलने में बहुत निपुण था। दूर दूर तक उसकी प्रसिद्धि थी। बड़े बड़े शतरञ्ज के खिलाड़ी भी उससे मुकाबला न कर पाते थे।

रोज शतरञ्ज के खिलाड़ियों को खेलने के लिए आता देख राजा ने घोषणा की-"जो कोई शतरञ्ज में मुझसे हार जायेगा, उसका सिर काट दिया जायेगा।"

यह घोषणा सुनते ही, शतरञ्ज के खिलाड़ियों ने आना बन्द कर दिया। राजा से शतरञ्ज खेलने के लिए कोई न आता। अगर भूला भटका, इक्का-दुक्का कोई पहुँच भी जाता, तो राजा उनको अपनी घोषणा याद दिलाता। और अगर कोई ज़िद पकड़कर खेलता भी, तो राजा उसको हराकर अपनी घोषणा के अनुसार उसका सिर कटवा देता।

जब दो-चार के सिर इस तरह कट गये तो राजा से शतरञ्ज खेलनेवाला ही कोई न रहा। फिर राजा की भी शतरञ्ज खेलने की आदत जाती रही।

उन्हीं दिनों कावेरी नदी के किनारे एक पण्डित रहा करता था। वह शतरञ्ज का बहुत अच्छा खिलाड़ी था। अगर कोई शतरञ्ज खेल रहा होता, तो प्रायः वह कहा करता-"यह दाँव खेलो, और काले राजा को पकड़ लो।" अगर कोई खेलने का मौका देता तो वह स्वयं उन्हें खेलकर भी दिखा देता।

इस पण्डित तक मगध देश के राजा की घोषणा पहुँची। उसको राजा पर गुस्सा आया।इस राजा को इतना घमण्ड क्यों है? शतरञ्ज खेल का मज़ा खेलने में है, न कि जीतने में। खेल में तो एक जीतनेवाला

श्रीमती डी. मञ्जुलता



होगा और दूसरा हारनेवाला ही। सिर्फ हार जाने से ही क्या यह राजा एक खिलाड़ी का सिर कटवा सकता है?

उस पण्डित ने मगध देश के राजा को सबक सिखाने की सोची। वह पैदल चलता चलता मगध देश पहुँचा। जैसे तैसे उसको राजा का दर्शन भी मिल गया।

"महाराजा! मैं कावेरी के किनारे रहता हूँ। यह जानकर कि शतरञ्ज में आपको कोई हरा नहीं सकता, आपका खेल देखने मैं चला आया हूँ।" पण्डित ने कहा।

"हाँ! मुझे भी शतरञ्ज खेलने की मर्जी हो रही है, पर कोई खिलाड़ी ही नहीं मिलता। मैंने यह घोषणा कर रखी है, अगर कोई मुझसे हार गया तो मैं उसका सिर कटवा दूँगा। इसलिए कोई आता ही नहीं है।" राजा ने कहा।

पण्डित ने कुछ सोच कर कहा- "अगर ऐसी बात है तो मैं आपसे खेलूँगा।"

"अरे पण्डित, कही पागल तो नहीं हो गये हो? हार गये तो सजा भोगने के लिए तैयार हो न?" राजा ने पूछा।

इससे पहले कि मैं इस प्रश्न का जवाब दूँ, मैं चाहता हूँ कि आप कृपया मेरे एक सन्देह का निवारण करें।" पण्डित ने कहा।

"बताओ, तुम्हारा क्या सन्देह है?" राजा ने पूछा।

"अगर खेल में मैं हार गया तो आप मेरा सिर कटवा देंगे। मान लीजिये, जगर में जीत गया तो आप मुझे क्या देंगे?" पण्डित ने पूछा।

"शतरञ्ज में जीतनेवाला जो चाहे, में उसे दूँगा। कहो, क्या चाहिये?" राजा ने पूछा।

"अगर मैं जीत गया तो मुझे धान दिलवाइए। शतरञ्ज के एक खाने के लिये,

दूसरे खाने से दुगने के हिसाब से, मुझे ६४ खानों के लिये धान दीजिये। मैं इससे अधिक कुछ नहीं चाहता।" पण्डित ने कहा।

"तुम भी क्या नादान हो। मुझे शतरञ्ज में हराकर यही चाहते हो? लगता है, तुम्हें जीतने की उम्मीद नहीं है।" राजा ने कहा।

"जी! उम्मीद तो अलग, में एक ही खेल में आपको दो बार हरा सकता हूँ।" पण्डित ने कहा।

"मतलब?" राजा ने पूछा।

"वह आपसे खेल ख़तम होने पर पता लग जायेगा।" पण्डित ने कहा। अगले दिन शतरञ्ज के खेल का प्रबन्ध किया गया। खेल देखने के लिये भीड़ जमा हो गई। सबने सोचा कि विचारे पण्डित की जान जायेगी। राजा ने खूब डटकर खेला। पर अन्त में पण्डित ही जीता।

"मैं हार गया हूँ। तुम सचमुच बहुत अच्छे खिलाड़ी हो। पर तुम तो कहते थे कि मुझे दो बार हराओगे, पर एक ही बार हराया है।" राजा ने कहा।

"पहले आप मुझे मेरा ईनाम दिल्वाइये, फिर आपको दूसरी हार



के बारे में बताऊँगा।" पण्डित ने कहा। राजा ने सिपाहियों को धान के बोरे लाने के लिये कहा।

"पहले यह तो हिसाब लगाइये कि मुझे कितना धान देना पड़ेगा। उस हिसाब के अनुसार धान के बोरे मँगाये जा सकते हैं।" पण्डित ने कहा।

राजा ने गणित के पण्डितों को बुलवाया। "पहले खाने में कितने दाने रखे जाये?" गणित के पण्डितों ने पूछा।

"एक दाना काफी है।" पण्डित ने कहा। राजा पण्डित के सन्तोष को देखकर

जरा मुस्कराया। पहले खाने में एक दाना, दूसरे में दो, तीसरे में चार, इस तरह ६४ खानों का हिसाब लगाकर गणित के पण्डितों ने यह संख्या बताई:

१८४४६७४४०७३७०९५५१६१५

यह सुन राजा हक्का वक्का रह गया।

"अब यह हिसाब लगाइये कि यह धान कितने बोरे में आ सकेगा।" राजा ने कहा। गणित के पण्डितों ने सेर भर चावल लेकर गिने, और फिर बोरे भर धान का हिसाब लगाकर उन्होंनें बताया-"महाराज! दो लाख वर्षों तक आपको हमारे राज्य में पैदा होनेवाले धान को देते रहना होगा।" राजा के आश्चर्य की सीमा न रही। "दूसरी बार हारने का क्या यही मतलब है?" राजा ने पूछा।

"हाँ, आप कह रहे थे कि मैं बहुत कम माँग रहा था। अगर मैं हार जाता तो मेरा सिर कट जाता। मैं जीता हूँ, पर मेरा माँगा किसी भी हालत में आप नहीं दे सकते।" पण्डित ने कहा।

"यह गनीमत है कि खेल में जीत गये हो। हार गये होते तो क्या होता? तुमने इतनी हिम्मत कैसे की?" राजा ने पूछा।

"जब आपने मेरे माँगे को देना स्वीकार कर लिया था तभी मैं समझ गया था कि आपको गणित का ज्ञान नहीं है। यह सोचकर कि आप जरूर हार जायेंगे, मैने दाँव खेलना शुरू किया था। अगर आप गणित का ज्ञान रखते तो मैं आपसे खेलता ही नहीं।" पण्डित ने कहा। राजा को पण्डित के पाण्डित्य से बहुत सन्तोष हुआ, और उसको बहुत सा धन-धान्य देकर विदा किया। राजा का गर्व भङ्ग हुआ, और वह उस दिन से लेकर सब से शतरञ्ज खेलने लगा।-



CHANDAMAMA (Hindi) FEBRUARY 1956 Regd. No. M.



रंगीन चित्र-कथा चित्र – १